



INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

गौरी शंकर उपाध्याय द्वारा संकलित बुन्देली लोकोक्तियों में जीवन दर्शन और लोकमूल्य

कल्पना सिंह, डॉ ब्रजलाता सिंह
हिंदी विभाग -कला संकाय
पी. के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी म.प्र.

सारांश

यह शोध पत्र डॉ. गौरीशंकर उपाध्याय द्वारा संकलित बुन्देली लोकोक्तियों में जीवन दर्शन और लोकमूल्यों की विवेचना करता है। लोकोक्तियाँ, जो पीढ़ी दर पीढ़ी साझा की जाती हैं, किसी समुदाय की ज्ञान और सांस्कृतिक धरोहर को संजोने का एक महत्वपूर्ण माध्यम हैं। बुन्देली भाषा में ये लोकोक्तियाँ न केवल लोगों के जीवन के दैनिक अनुभवों का हिस्सा हैं, बल्कि उनके सामाजिक, नैतिक और दार्शनिक दृष्टिकोण को भी उजागर करती हैं। इस अध्ययन का उद्देश्य यह विश्लेषण करना है कि डॉ. उपाध्याय द्वारा संकलित लोकोक्तियाँ किस प्रकार बुन्देली समाज के जीवन दर्शन और लोकमूल्यों का प्रतिनिधित्व करती हैं। प्रमुख लोकोक्तियों के माध्यम से इस शोध में यह समझने का प्रयास किया गया है कि ये लोकोक्तियाँ किस प्रकार समाज के नैतिक आचार, स्त्री, श्रम, शैक्षिक और पर्यावरण संबंधी दृष्टिकोण को व्यक्त करती हैं। इसके अतिरिक्त, यह अध्ययन यह भी दर्शाता है कि ये लोकोक्तियाँ आज के समाज में कैसे प्रासंगिक बनी हुई हैं और सांस्कृतिक धरोहर के रूप में उनकी महत्ता क्या है।

1. परिचय

बुन्देली, हिंदी की एक प्रमुख उपभाषा है, जो मुख्य रूप से बुन्देलखंड क्षेत्र में बोली जाती है। यह भाषा अपनी सांस्कृतिक विशेषताओं के लिए जानी जाती है, जिसमें लोक संगीत, नृत्य, और मौखिक परंपराएँ शामिल हैं। बुन्देली समाज की संस्कृति ग्रामीण जीवन से जुड़ी हुई है, जहाँ कृषि मुख्य आजीविका का स्रोत है। बुन्देलखंड के लोग अपनी प्रकृति, सामाजिक संरचना, और जीवन के अन्य पहलुओं के साथ गहरे जुड़े हुए हैं, और यह सब उनकी भाषा और लोकोक्तियों में प्रतिध्वनित होता है। बुन्देली लोकोक्तियाँ केवल भाषा का एक हिस्सा नहीं हैं, बल्कि वे सांस्कृतिक धरोहर के रूप में कार्य करती हैं। ये लोकोक्तियाँ न केवल ज्ञान का संचार करती हैं, बल्कि समाज के नैतिक आचार, शैक्षिक और पर्यावरणसंबंधी दृष्टिकोण को भी व्यक्त करती हैं। इन लोकोक्तियों के माध्यम से बुन्देली समाज अपने अनुभवों, संघर्षों और नैतिक सिद्धांतों को साझा करता है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ते हैं।

1.1 लोकोक्तियों और मुहावरों का महत्व—लोकोक्तियाँ और मुहावरे किसी भी संस्कृति का अभिन्न हिस्सा होते हैं। वे न केवल ज्ञान का संचार करते हैं, बल्कि समाज के सामूहिक मूल्य और आचार संहिताओं को भी व्यक्त करते हैं। बुन्देली संस्कृति में, लोकोक्तियाँ विशेष रूप से सामाजिक व्यवहार, रिश्तों, और जीवन के विभिन्न पहलुओं पर गहरी समझ प्रदान करती हैं। ये संक्षिप्त, प्रतीकात्मक अभिव्यक्तियाँ होती हैं, जो जटिल विचारों को सरल और प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करती हैं। बुन्देली भाषा में लोकोक्तियाँ समाज की नैतिकता, कार्यक्षमता, और रिश्तों के महत्व को प्रकट करती हैं। ये जीवन के विभिन्न पहलुओं से जुड़ी होती हैं, जैसे कृषि, श्रम, परिवार, और समाज में सहजीवन, जो बुन्देली समाज की सोच और जीवन के प्रति दृष्टिकोण को स्पष्ट करती हैं।

1.2 गौरीशंकर उपाध्याय का योगदान—डॉ. गौरीशंकर उपाध्याय, एक प्रमुख भाषा वैज्ञानिक और विद्वान, ने बुन्देली लोक साहित्य के अध्ययन और संकलन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनके द्वारा संकलित बुन्देली लोकोक्तियाँ इस भाषा और उसकी संस्कृति को संरक्षित करने के लिए एक अमूल्य धरोहर हैं। उनकी पुस्तकें जैसे “बुन्देली लोकोक्ति कोश” और “बुन्देली मुहावरा कोश” बुन्देली भाषा में लोकोक्तियों और मुहावरों के संग्रह का सबसे महत्वपूर्ण कार्य हैं। डॉ. उपाध्याय ने अपने संकलन में हजारों लोकोक्तियाँ इकट्ठी कीं, जो न केवल बुन्देली समाज की दिनचर्या और जीवन दर्शन को प्रदर्शित करती हैं, बल्कि लोकमूल्यों और समाजिक सिद्धांतों की भी गहरी समझ देती हैं। उनका कार्य एक प्रामाणिक दस्तावेज है, जो आने वाली पीढ़ियों के लिए इस भाषा और संस्कृति के महत्व को उजागर करता है।

2. साहित्य समीक्षाएँ

2.1. उपाध्याय, गौरीशंकर (2005), “बुन्देली लोकोक्ति कोश”, यह ग्रंथ बुन्देली लोकोक्तियों का प्रामाणिक संकलन है, जिसमें सामाजिक, नैतिक और सांस्कृतिक संकेतों की गूढ़ता देखी जा सकती है। उपाध्याय जी ने इसमें ग्रामीण जनजीवन के विविध अनुभवों, परंपराओं और लोक विश्वासों को सरल भाषा में संकलित कर लोकमूल्य की विविध छवियाँ प्रस्तुत की हैं।

2.2. सिंह, रामविलास (1998), “हिंदी और उपभाषाएँ”, इस ग्रंथ में लेखक ने बुन्देली सहित उपभाषाओं की सांस्कृतिक उपयोगिता और लोकोक्तियों के महत्व को रेखांकित किया है। पुस्तक में यह भी स्पष्ट किया गया है कि किस प्रकार उपभाषाएँ सामाजिक संरचना की जड़ों से जुड़ी होती हैं, और उनमें प्रयुक्त लोकोक्तियाँ स्थानीय जीवन-दर्शन का सशक्त माध्यम बनती हैं।

2.3. यादव, महेन्द्र (2010), “भारतीय भाषाओं में लोकोक्तियाँ”, इस ग्रंथ में बुन्देली सहित विभिन्न भारतीय भाषाओं की लोकोक्तियों में जीवनदर्शन की तुलना की गई है। यादव जी ने यह दर्शाया कि भारतीय भाषाओं में लोकोक्तियाँ केवल कहावतें नहीं, बल्कि सांस्कृतिक स्मृति और नैतिक दिशा-निर्देश भी हैं।

2.4. शुक्ला, अरुण (2003), “लोककथाओं और लोकोक्तियों में जीवन मूल्य”, इस में लेखक ने लोकसाहित्य को समाज के नैतिक मूल्यों का वाहक बताया है। उन्होंने यह भी दर्शाया है कि कैसे लोककथाएँ और लोकोक्तियाँ मनुष्य के व्यवहार, रिश्तों और निर्णयों को प्रभावित करने में सहायक होती हैं।

2.5. त्रिपाठी, ओमप्रकाश (2012), “बुन्देलखण्ड की सांस्कृतिक विरासत”, इस पुस्तक में बुन्देली लोकभाषा की जीवंत परंपराओं और लोकोक्तियों की सामाजिक व्याप्ति का वर्णन किया गया है। लेखक ने विशेष रूप से यह विश्लेषण किया है कि बुन्देली लोकोक्तियाँ समय की कसौटी पर खरी उतरती हैं और आज भी प्रासंगिक हैं।

2.6. भारद्वाज, नरेन्द्र (2007), “बुन्देली भाषा और साहित्य”, लेखक ने बुन्देली भाषा की संरचना, मुहावरे, और लोकोक्तियों के भाषाशास्त्रीय पक्षों की विवेचना की है। पुस्तक में यह भी बताया गया है कि बुन्देली लोकोक्तियाँ कैसे सामाजिक संरचना, वर्ग संघर्ष और धार्मिक आस्थाओं को प्रभावित करती हैं।

2.7. शर्मा, मंजुला (2015), “भारतीय ग्रामीण जीवन में लोकोक्तियाँ”, ग्रामीण समाज की मानसिकता को लोकोक्तियों के माध्यम से समझने का प्रयास किया गया है। शर्मा जी का विश्लेषण दर्शाता है कि लोकोक्तियाँ ग्राम्य जीवन की व्यवहारिक बुद्धि और सांस्कृतिक चेतना का समन्वय हैं।

2.8. दुबे, कमल किशोर (2013), “बुन्देली लोक साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन”, इसमें लोकोक्तियों को समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य से देखा गया है। लेखक ने दर्शाया कि बुन्देली लोकोक्तियाँ सामाजिक वर्ग, लिंग भेद, और ग्रामीण संरचना के सन्दर्भ में किस प्रकार कार्य करती हैं।

2.9. वर्मा, शशिप्रभा (2008), “भारतीय भाषाई विविधता और लोकोक्ति कोश”, उन्होंने इस बात पर विशेष बल दिया है कि हर क्षेत्र की लोकोक्तियाँ उस क्षेत्र की ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का दर्पण होती हैं।

2.10. मिश्र, अजय (2016), “लोकसंस्कृति और भाषा”, इसमें लोकोक्तियों को लोकसंस्कृति के दर्पण के रूप में प्रस्तुत किया गया है। मिश्र जी ने लोकोक्तियों की सामाजिक भूमिका, पीढ़ियों के बीच संवाद की प्रक्रिया, और सांस्कृतिक पहचान की अभिव्यक्ति के रूप में इनकी शक्ति को रेखांकित किया है।

3. उद्देश्य

यह शोध पत्र यह समझने का प्रयास करता है कि डॉ. गौरीशंकर उपाध्याय द्वारा संकलित बुन्देली लोकोक्तियाँ किस प्रकार बुन्देली समाज के जीवन दर्शन और लोकमूल्यों को प्रकट करती हैं। इस अध्ययन में प्रमुख लोकोक्तियों के माध्यम से यह देखा जाएगा कि ये लोकोक्तियाँ किस प्रकार समाज के नैतिक सिद्धांतों, रिश्तों, कार्य के दृष्टिकोण और प्राकृतिक वातावरण के प्रति दृष्टिकोण को व्यक्त करती हैं। इसके साथ ही, यह भी दर्शाया जाएगा कि आज के बदलते समय में ये लोकोक्तियाँ कितनी प्रासंगिक बनी हुई हैं और इनका समाज पर क्या प्रभाव है।

4. वैचारिक ढांचा

4.1 जीवन दर्शन और लोकमूल्य की परिभाषा—शोध में सबसे पहले जीवन दर्शन और लोकमूल्य के अर्थ को समझना जरूरी है। जीवन दर्शन वह सिद्धांत होते हैं, जो मानव जीवन के उद्देश्य, नैतिकता और अस्तित्व को निर्धारित करते हैं। यह दर्शन व्यक्ति के व्यवहार, दृष्टिकोण और समाज के प्रति दृष्टिकोण को आकार देता है। वहीं, लोकमूल्य वे नैतिक मूल्य होते हैं, जो किसी समुदाय में परंपरागत रूप से पाले जाते हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी संचारित होते हैं। बुन्देली समाज के जीवन दर्शन और लोकमूल्य दोनों ही एक-दूसरे से गहरे रूप से जुड़े हुए हैं। बुन्देली लोकोक्तियाँ इन दोनों को अभिव्यक्त करने का सबसे प्रभावी माध्यम हैं। ये लोकोक्तियाँ समाज की नैतिकता, रिश्तों, श्रम, और प्राकृतिक दृष्टिकोण को व्यक्त करती हैं और इस प्रकार समाज में आदर्श जीवन जीने के मार्गदर्शक सिद्ध होती हैं।

4.2 लोकोक्तियाँ, सांस्कृतिक धरोहर के रूप में—लोकोक्तियाँ केवल शब्दों का खेल नहीं होतीं, बल्कि ये समाज के सामूहिक ज्ञान और विश्वासों का संरक्षित रूप होती हैं। ये प्राचीन ज्ञान और अनुभवों को सरल, संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करती हैं, जो समाज में लोकाचार, सामाजिक व्यवस्था, और नैतिक मान्यताओं को स्थापित करती हैं। बुन्देली समाज की लोकोक्तियाँ भी समाज के इन पहलुओं को उजागर करती हैं, जिससे हमें उनके सोचने के तरीके, मूल्य और विश्वासों का अंदाजा मिलता है। डॉ. गौरीशंकर उपाध्याय ने अपने संकलन में इन्हीं लोकोक्तियों को संरक्षित किया है, जो न केवल बुन्देली भाषा की विशेषताओं को दर्शाती हैं, बल्कि समाज के जीवन दर्शन और लोकमूल्य को भी उजागर करती हैं।

5. गौरीशंकर उपाध्याय द्वारा संकलित प्रमुख बुन्देली लोकोक्तियों का विश्लेषण

बुन्देली लोकोक्तियाँ केवल भाषा की अलंकारिक अभिव्यक्ति नहीं हैं, बल्कि समाज की सामूहिक चेतना, जीवन दृष्टिकोण और सांस्कृतिक नैतिकता का दर्पण हैं। डॉ. गौरीशंकर उपाध्याय ने अपने संकलन में जो लोकोक्तियाँ प्रस्तुत की हैं, वे बुन्देली समाज के हृदय से निकली हुई वे सूक्तियाँ हैं, जो पीढ़ियों के अनुभव, लोकविवेक और व्यवहारिक ज्ञान को संजोती हैं। इस अध्याय में हम कुछ प्रमुख लोकोक्तियों का विश्लेषण करेंगे और देखेंगे कि उनमें जीवन दर्शन एवं लोकमूल्य किस प्रकार समाहित हैं।

5.1. "जैसी करनी वैसी भरनी"—यह लोकोक्ति कर्म और फल के सिद्धांत पर आधारित है। यह सीधे-सीधे हिंदू जीवन दर्शन से जुड़ती है, जहाँ ष्कर्मफल का प्रमुख स्थान है। इसका निहितार्थ है कि जो व्यक्ति जैसा कर्म करता है, उसे वैसा ही फल भुगतना पड़ता है। यह विचार आत्म-उत्तरदायित्व और नैतिकता को बढ़ावा देती है। सत्य, न्याय, और ईमानदारी को सामाजिक मूल्य के रूप में पुष्ट करती है।

5.2. "जाको काम, ताको नाम"—इस लोकोक्ति का अर्थ है कि जो व्यक्ति कार्य करता है, उसी का नाम होता है। बुन्देली समाज में कर्मठता को एक आदर्श गुण माना गया है। यह लोकोक्ति परिश्रम और पहचान के बीच के संबंध को दर्शाती है। यह लोकोक्ति निष्काम कर्मयोग की भावना से जुड़ती है। मेहनत, निष्ठा और आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देती है।

5.3. "अधजल गगरी छलकत जाय"—इस लोकोक्ति में उस व्यक्ति की आलोचना की जाती है जो ज्ञानहीन होते हुए भी दिखावे में लगा रहता है। गगरी (घड़ा) जब अधभरा होता है तो ज्यादा छलकता है। कृ यांनी कम ज्ञानी अधिक दिखावा करता है। यह विनम्रता और आत्मसमीक्षा का पाठ पढ़ाती है। ज्ञान, संकोच, और आत्मबोध को समाज में प्रतिष्ठित करती है।

5.4. "बोया पेड़ बबूल का, तो आम कहाँ से होय"—यह लोकोक्ति कर्म और परिणाम के सीधा संबंध को व्याख्यायित करती है। यदि हम बबूल का पेड़ लगाएंगे तो स्वाभाविक है कि हमें कांटे ही मिलेंगे, आम नहीं। यह सिद्धांतिक रूप से भाग्य और कर्मवाद के द्वंद्व में कर्म को प्राथमिकता देती है। यह सिखाती है कि भलाई का फल भला और बुराई का फल बुरा ही होगा।

5.5. "नाच न आवे आँगन टेढ़ो"—यह लोकोक्ति उन लोगों पर कटाक्ष करती है जो अपनी असफलता का दोष परिस्थितियों पर डालते हैं। यह सिखाती आत्मालोचना की आवश्यकता को इंगित करती है। यह लोकोक्ति ईमानदारी, पारदर्शिता और आत्म-सुधार को प्रोत्साहित करती है।

5.6. "घर की मुर्गी दाल बराबर"—इस लोकोक्ति से यह स्पष्ट होता है कि परिवार या निकट के लोगों की प्रतिभा, योग्यता या मूल्य को समाज में कम आँका जाता है। यह पहचान और सम्मान की आवश्यकता पर बल देती है। यह लोकोक्ति दूसरों की कद्र करना, विशेषकर अपनों की, एक आवश्यक सामाजिक मूल्य बनाती है।

5.7. "करै सो भरै, बजै सो झनकारै"—इस बुन्देली लोकोक्ति में क्रिया और प्रतिक्रिया का संबंध बताया गया है। कृ जो बोलेगा वही सुना जाएगा, जो करेगा वही भुगतेगा। यह लोकोक्ति क्रिया के प्रति उत्तरदायित्व की भावना दर्शाती है और संवाद में मर्यादा और व्यवहार में सजगता को बढ़ावा देती है।

5.8. "समय बड़ा बलवान"—यह लोकोक्ति समय की ताकत को दर्शाती है। कृ मनुष्य की नियति समय के अनुसार बदलती है। आज जो ऊपर है, कल नीचे भी हो सकता है। यह लोकोक्ति निरंतरता, धैर्य और संतुलन की शिक्षा देती है। यह विनम्रता और सहिष्णुता को सामाजिक व्यवहार में आवश्यक बनाती है।

उपरोक्त सभी लोकोक्तियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि डॉ. गौरीशंकर उपाध्याय द्वारा संकलित बुन्देली लोकोक्तियाँ केवल भाषा की अभिव्यक्ति नहीं हैं, बल्कि उनमें गहराई से बुन्देली समाज का जीवनदर्शन, लोकमूल्य, और नैतिक दृष्टिकोण समाहित है। इन लोकोक्तियों के माध्यम से समाज ने अपने अनुभवों, नैतिकताओं, और चेतनाओं को अगली पीढ़ी तक पहुँचाया है। यह संकलन न केवल भाषाई अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि सांस्कृतिक समाजशास्त्र और दर्शनशास्त्र के लिए भी अत्यंत उपयोगी सिद्ध होता है।

6. बुन्देली लोकोक्तियों में स्त्री, श्रम और पर्यावरण संबंधी लोकदृष्टि

बुन्देली लोकोक्तियाँ न केवल भाषा की जीवंत इकाइयाँ हैं, बल्कि वे समाज की सामूहिक चेतना की संवाहक भी हैं। इन लोकोक्तियों में बुन्देली जनजीवन, विशेष रूप से स्त्री की स्थिति, श्रम के प्रति दृष्टिकोण और पर्यावरण से संबंधों का सहज चित्रण मिलता है। गौरीशंकर उपाध्याय द्वारा संकलित लोकोक्तियों में ये सभी पहलू विशेष रूप से उभरकर सामने आते हैं। यह अध्याय इन्हीं तीन प्रमुख दृष्टिकोणों—कृ स्त्री, श्रम और पर्यावरण—कृ के लोकचिंतन का विवेचन करता है।

6.1. स्त्री संबंधी लोकदृष्टि—बुन्देली लोकोक्तियाँ स्त्री को लेकर दो प्रकार के दृष्टिकोण सामने रखती हैं। कृ एक ओर वह शक्ति, सहनशीलता और परिवार की धुरी के रूप में प्रस्तुत होती है, तो दूसरी ओर कई लोकोक्तियाँ पितृसत्तात्मक सोच से प्रभावित होकर स्त्री को द्वितीयक दर्जा देती हैं।

- **घर की लाज, घरवाली के हाथ—**यह लोकोक्ति बताती है कि परिवार की प्रतिष्ठा और सम्मान स्त्री के आचरण पर निर्भर करता है। इसमें स्त्री को मर्यादा और संस्कार की प्रतिमूर्ति माना गया है।
- **घर चलावै नारी, घर बिगाड़ै नारी—**स्त्री की भूमिका को निर्णायक रूप में चित्रित किया गया है। कृ वह घर को संवार भी सकती है और यदि दुर्बुद्धि हो तो बिगाड़ भी सकती है।
- **छोरी जाति तो डगमग पाँव—**यह लोकोक्ति स्त्री के निर्णयों को अविश्वसनीय मानते हुए उसके प्रति सामाजिक पूर्वाग्रह को दर्शाती है।
- **नारि के बस न तीनि ठाँव कृ घर, खेत, चौपाल—**यह लोकोक्ति स्त्री की सामाजिक सीमाओं को दर्शाती है और पुरुष-प्रधान समाज में उसकी भूमिका को संकुचित करती है।

विश्लेषण—गौरीशंकर उपाध्याय के संकलन से यह स्पष्ट होता है कि बुन्देली समाज में स्त्री की भूमिका गहरी और बहुआयामी रही है, परंतु वह परंपरागत मर्यादाओं में बंधी रही। लोकोक्तियाँ उसकी शक्ति और सीमाओं दोनों को रेखांकित करती हैं।

6.2. श्रम संबंधी लोकदृष्टि—बुन्देली समाज श्रमशीलता को जीवन का अनिवार्य अंग मानता है। अधिकांश लोकोक्तियाँ परिश्रम को न केवल सम्मान देती हैं, बल्कि उसे सफलता और आत्मनिर्भरता की कुंजी भी बताती हैं।

- **बिना मेहनत के ना होय भात**—यह स्पष्ट करती है कि श्रम के बिना किसी भी प्रकार का सुख या उपलब्धि असंभव है।
- **हाथ के मेहनत से पेट भरै**—व्यक्ति की आर्थिक स्वतंत्रता और गरिमा का आधार उसका परिश्रम है।
- **जो खोदै न खेत, सो माँगै भात**—यह लोकोक्ति आलस्य और परजीवी प्रवृत्ति की आलोचना करती है।
- **सोवै खेत, भूखै पेट**—यहां श्रम की निरंतरता और जीवन के लिए उसकी अपरिहार्यता का संदेश है।

विश्लेषण: गौरीशंकर उपाध्याय की संकलित लोकोक्तियाँ श्रम के प्रति बुन्देली समाज के आदर, स्वाभिमान और आत्मनिर्भरता को दर्शाती हैं। ये लोकोक्तियाँ कृषि प्रधान समाज की मानसिकता और जीवन शैली की झलक देती हैं।

6.3. पर्यावरण और प्रकृति संबंधी लोकदृष्टि—बुन्देली लोकोक्तियों में प्रकृति के साथ गहरे भावनात्मक और जीवनोपयोगी संबंध को दर्शाया गया है। इसमें जल, वृक्ष, भूमि और मौसम के प्रति लोकविवेक समाहित है।

- **बरसै न पानी, भुखमरी आनें**—यह वर्षा पर निर्भरता और जल के अभाव में उत्पन्न संकट को स्पष्ट करती है।
- **पानी बिना परान नहीं**—जीवन में जल की अनिवार्यता का सूक्त वाक्य।
- **पेड़ लगायो, सुख पायो**—पर्यावरण संरक्षण और वृक्षारोपण को लोक जीवन में आत्मसात किया गया है।
- **बिन बीज के नाहीं फसल**—प्रकृति के नियमों की स्वीकृति और खेती के प्रति यथार्थ दृष्टिकोण।
- **सावन में न पसे, तो भादों में क्या होय?**—समय की महत्ता और प्राकृतिक चक्र के अनुरूप क्रियाओं की आवश्यकता को दर्शाता है।

विश्लेषण: गौरीशंकर उपाध्याय के संकलन में पर्यावरण के प्रति बुन्देली समाज की जागरूकता और कृतज्ञता झलकती है। प्रकृति के साथ सहयोग की भावना, उसका दोहन नहीं बल्कि संरक्षण, लोकदृष्टि का अभिन्न भाग है।

इस से स्पष्ट होता है कि बुन्देली लोकोक्तियाँ केवल भाषा या शैली का ही विषय नहीं हैं, बल्कि उनमें समाज की सोच, अनुभव और दृष्टिकोण गहराई से छिपे हुए हैं। स्त्री के संदर्भ में जहां उसकी भूमिका को निर्णायकमाना गया, वहीं पितृसत्ता की सीमाएं भी दिखाई देती हैं। श्रम को सामाजिक गरिमा और आत्मनिर्भरता से जोड़ा गया है। पर्यावरण के प्रति लोकचेतना एवं प्रकृति के नियमों की समझ बुन्देली जीवन दर्शन में अंतर्निहित है। गौरीशंकर उपाध्याय ने इन विविध पहलुओं को संकलन में समाहित कर केवल लोकोक्तियाँ ही नहीं सहेजीं, बल्कि एक पूरे लोकजीवन की झांकी प्रस्तुत की है।

7. बुन्देली लोकोक्तियों का नैतिक एवं शैक्षिक मूल्यांकन

बुन्देली लोकोक्तियाँ मात्र भाषा की अलंकारिक अभिव्यक्तियाँ नहीं, बल्कि समाज की नैतिक चेतना, अनुभव और शिक्षाओं की संचित पूँजी हैं। गौरीशंकर उपाध्याय द्वारा संकलित बुन्देली लोकोक्तियाँ हमें बताती हैं कि किस प्रकार एक लोकसमाज अपने अनुभवों को छोटे, चुटीले और अर्थगर्भित वाक्यों के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी संप्रेषित करता है। इस अध्याय में हम इन लोकोक्तियों का नैतिक और शैक्षिक विश्लेषण करेंगे तथा आधुनिक समाज में उनकी प्रासंगिकता को समझने का प्रयास करेंगे।

7.1. नैतिक मूल्य और बुन्देली लोकोक्तियाँ—बुन्देली लोकोक्तियों में सत्य, ईमानदारी, संयम, परिश्रम, न्याय, दया, अहंकार—विनाश, वचन—पालन जैसे नैतिक गुणों का स्पष्ट उल्लेख होता है।

- **झूठ के पाँव न होंय**—यह लोकोक्ति बताती है कि झूठ टिकाऊ नहीं होता। इसमें सत्य की अपरिहार्यता और दीर्घकालिक महत्व है।
- **साँच को आँच नहीं**—यह सार्वभौमिक नैतिकता की स्थापना करती है कृ सत्य की रक्षा स्वाभाविक रूप से होती है।
- **जैसी करनी वैसी भरनी**—कर्मफल के सिद्धांत को जन-मानस में स्थापित करती है।

- बना बोए न उगै फसल—यह बताती है कि परिश्रम के बिना कोई भी उपलब्धि नहीं मिलती।
- लालच बुरी बला—यह लोकोक्ति लोभ की नकारात्मकता पर केंद्रित है।
- ज्यादा खाय पचे नहीं—यहाँ भोग—विलास की सीमाओं का संदेश है।

विश्लेषण: इन लोकोक्तियों के माध्यम से बुन्देली समाज में नैतिक आदर्शों को सरल, व्यवहारिक और प्रभावशाली ढंग से जनमानस में रोपने का कार्य हुआ है। गौरीशंकर उपाध्याय ने इन्हें व्यवस्थित करके बुन्देलखंड की नैतिक चेतना को पाठ्यसामग्री के रूप में प्रस्तुत किया।

7.2. शैक्षिक दृष्टिकोण से उपयोगिता—लोकसाहित्य की इकाइयाँ छात्रों को जटिल जीवन—ज्ञान सहज रूप में सिखाने का माध्यम बन सकती हैं। लोकोक्तियाँ विद्यार्थियों में भाषा की सुंदरता, चिंतन की गहराई और मूल्यों की स्थापना में सहायक हो सकती हैं।

- **भाषा शिक्षण में—**लोकोक्तियाँ भाषा की लय, संक्षिप्तता और प्रभावी अभिव्यक्ति की आदर्श मिसाल हैं।
उदाहरण: “नाच न आवे आँगन टेढ़ा” छात्रों को कारण और बहाने की पहचान करना सिखाता है।
- **नैतिक शिक्षा में—**स्कूलों में नैतिक शिक्षा को व्यवहारिक बनाने हेतु लोकोक्तियाँ अत्यंत उपयोगी हैं।
“बोया पेड़ बबूल का, तो आम कहाँ से होय” जैसी लोकोक्तियाँ कर्म—सिद्धांत को ठोस उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करती हैं।
- **मूल्यपरक शिक्षा और नवाचार में—**“घर की मुर्गी दाल बराबर”— यह स्वयं की उपेक्षा और बाहरी प्रभाव के प्रति चेतना विकसित करती है।

लोकोक्तियाँ मूल्यपरक शिक्षा में नवीन शिक्षण—सामग्री के रूप में प्रयुक्त की जा सकती हैं।

विश्लेषण—गौरीशंकर उपाध्याय के द्वारा संकलित लोकोक्तियाँ न केवल साहित्यिक महत्व रखती हैं, बल्कि वे शिक्षाशास्त्र की दृष्टि से भी अत्यंत उपयोगी हैं। आज के राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी मातृभाषा और सांस्कृतिक तत्वों के उपयोग पर बल दिया गया है, जहाँ ये लोकोक्तियाँ अधिक प्रासंगिक हो जाती हैं।

7.3 आधुनिक संदर्भ में लोकोक्तियों की प्रासंगिकता—

आज का समाज जहाँ तकनीक, उपभोक्तावाद और व्यक्तिगत स्वार्थ की ओर बढ़ता जा रहा है, वहाँ लोकसंस्कृति की इकाइयाँ जैसे कि लोकोक्तियाँ, सामाजिक संतुलन, मूल्य चेतना और आत्म—संवाद का माध्यम बन सकती हैं।

- **सामाजिक विघटन के बीच सामूहिक चेतना—**लोकोक्तियाँ सामूहिक अनुभवों का निचोड़ हैं। वे व्यक्ति को समाज से जोड़ती हैं।
- **नैतिक संकट का समाधान—**जब समाज में भ्रष्टाचार, छल—कपट, हिंसा बढ़ती है, तब लोकोक्तियाँ जैसे "कर भला तो हो भला" कृ नैतिक व्यवहार की ओर प्रेरित करती हैं।
- **डिजिटल युग में लोकबुद्धि—**आज के युवा वर्ग को यदि तकनीक के साथ लोकबुद्धि की समझ हो, तो वे अधिक संतुलित और संवेदनशील नागरिक बन सकते हैं।

विश्लेषण—गौरीशंकर उपाध्याय द्वारा संकलित बुन्देली लोकोक्तियाँ एक ऐसे समय में और अधिक प्रासंगिक हो जाती हैं जब मूल्य—च्युत समाज पुनः अपने जड़ों की ओर देखने की आवश्यकता अनुभव करता है। ये लोकोक्तियाँ आधुनिकता और परंपरा के बीच सेतु बना सकती हैं।

बुन्देली लोकोक्तियाँ, विशेषकर गौरीशंकर उपाध्याय द्वारा संकलित, मूल्यपरक चेतना, व्यवहारिक जीवन—दर्शन और शैक्षिक उपयोगिता का अद्भुत समन्वय हैं। ये लोकोक्तियाँ नैतिक मूल्यों का सरल संप्रेषण करती हैं, विद्यालयों और शिक्षण संस्थानों में लोकसाहित्य के प्रवेश का माध्यम बन सकती हैं, तथा आज के नैतिक और सामाजिक संकटों में मार्गदर्शक की भूमिका निभा सकती हैं। लोकबुद्धि की यह संपदा न केवल भाषा को समृद्ध करती है, बल्कि विवेकशील, मूल्यनिष्ठ और सामाजिक रूप से उत्तरदायी पीढ़ी के निर्माण में सहायक बनती है।

निष्कर्ष एवं सुझाव

इसमें पूरे शोध का सार निकाला गया है गौरीशंकर उपाध्याय जी द्वारा संकलित बुन्देली लोकोक्तियाँ केवल कहावतें नहीं हैं, बल्कि वे बुन्देलखंड के लोगों की सोच, जीवन-दृष्टि और नैतिक मूल्यों की जीवंत अभिव्यक्ति हैं। इन लोकोक्तियों में जीवन के अनुभव, नीति, तर्क, और हास्य-बुद्धि छिपी होती है। आज के समय में जब लोग अपनी लोकभाषा और संस्कृति को भूलते जा रहे हैं, ऐसे में उपाध्याय जी का कार्य एक संरक्षण की मशाल की तरह है। शोध के दौरान यह पाया गया कि, बुन्देली लोकोक्तियाँ नैतिक शिक्षा का माध्यम हो सकती हैं। इन्हें स्कूलों-कॉलेजों में पढ़ाया जाना चाहिए। डिजिटल माध्यमों से इन्हें जन-जन तक पहुँचाया जाए।

डॉ. गौरीशंकर उपाध्याय द्वारा संकलित बुन्देली लोकोक्तियाँ केवल भाषा की धरोहर नहीं, बल्कि बुन्देली जनजीवन के दर्शन, मूल्य और चेतना की जीवंत अभिव्यक्ति हैं। इन लोकोक्तियों के माध्यम से न केवल बुन्देली समाज की सोच को समझा जा सकता है, बल्कि भारतीय लोकदर्शन की समग्रता को भी देखा जा सकता है। यह शोध दर्शाता है कि उपाध्याय जी का योगदान केवल एक भाषाविद् के रूप में नहीं, बल्कि एक लोकदार्शनिक के रूप में भी अद्वितीय है।

संदर्भ सूची

1. उपाध्याय, गौरीशंकर. (2005). कोष बुन्देली लोकोक्ति एवं मुहावरे. झाँसीरू साहित्य भवन.
2. द्विवेदी, रामस्वरूप. (1998). बुन्देली भाषा और साहित्य. प्रयागरू हिन्दी साहित्य सम्मेलन.
3. शुक्ल, हरिशंकर. (2002). बुन्देली संस्कृति का साहित्यिक अध्ययन. भोपाल— मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी.
4. भारत सरकार. (2016). लोकसाहित्य एवं क्षेत्रीय भाषाएँ (रिपोर्ट). नई दिल्ली— संस्कृति मंत्रालय.
5. यादव, रामकुमार. (2011). हिंदी की क्षेत्रीय बोलियाँ. नई दिल्ली— राजपाल एंड संज.
6. त्रिपाठी, नगेन्द्र. (2008). भारतीय भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन. आगरा— केंद्रीय हिंदी संस्थान.
7. मिश्रा, सुधा. (2015). भारतीय कहावतों में लोक-ज्ञान, एक सांस्कृतिक भाषावैज्ञानिक दृष्टिकोण। भारतीय लोककथा अध्ययन पत्रिका, 12(1), 45–52।
8. सिंह, डी. पी. (2017). बुंदेलखंड की लोक-साहित्य, कहावतों और मुहावरों का एक अध्ययन। क्षेत्रीय संस्कृति अनुसंधान पत्रिका, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय।
9. योजना आयोग, भारत सरकार. (2012). बुन्देलखंड विकास रिपोर्ट. नई दिल्ली.
10. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, बुन्देली लोक साहित्य का डिजिटल संग्रह. प्राप्त किया गया